काव्यहेतु

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवदी
सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

वाग्देवतावतार आचार्य मम्मट ने काव्यहेतु को स्पष्ट करते हुए कहा है-

शक्तिनिपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञशिक्षाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे।।

अर्थात् शक्ति, लोक-शास्त्र-काव्य आदि के पर्यवेक्षण से उत्पन्न निपुणता और काव्य के जानने वाले (कवि और आलोचक) की शिक्षा के द्वारा अभ्यास- ये तीनों मिलकर काव्य के उद्भव के हेतु हैं।

इसे स्पष्ट करते हुए आचार्य मम्मट कहते है-

"शक्तिः कवित्वबीजरूपः संस्कारविशेषः, यां विनां काव्यं न प्रसरेत्, प्रसृतं वा उपहसनीयं स्यात्। लोकस्य स्थावरजङ्गमात्मकलोकवृत्तस्य शास्त्राणां छन्दोव्याकरणाभिधानकोशकलाचतुर्वर्गगजतुरगखड्गादिलक्षणग्रन्थानां काव्यानां महाकविसम्बन्धिनाम्, आदिग्रहणादितिहासादीनां च विमर्शनाद् व्युत्पत्तिः। काव्यं कर्तुं विचारयितुं च ये जानन्ति तदुपदेशन करणे योजने च पौनःपुन्येन प्रवृत्तिरिति त्रयः समुदिता न तु व्यस्ता तस्य काव्यस्योद्भवे निर्माणे समुल्लासे च हेतुर्न तु हेतवः"।

अर्थात् शक्ति (प्रतिभा) कवित्व का बीजभूत संस्कार विशेष है जिसके बिना काव्य का प्रसार नहीं हो सकता और यदि प्रसार हो भी जाय तो वह उपहास के योग्य होता है। लोक अर्थात् स्थावर-जङ्गम (जड़-चेतन) रूप जगत् के व्यवहार के, शास्त्र अर्थात् छन्द, व्याकरण, शब्द-कोश, कला (नृत्य-गीतादि), पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) के प्रतिपादक ग्रन्थ, गज, तुरग और खड्ग आदि के लक्षण ग्रन्थों और महाकवियों के काव्यों के तथा आदि ग्रहण से इतिहास आदि के अनुशीलन से उत्पन्न व्युत्पत्ति (निपुणता) तथा जो काव्य करना तथा विचार करना जानते हैं उनके उपदेश के अनुसार

काव्यनिर्माण और उनके संयोजन में बार-बार प्रवृत्ति अभ्यास ये तीनों सम्मिलित रूप से न कि अलग-अलग काव्य के उद्भव अर्थात् निर्माण और विकास (उत्कर्ष) के हेतु हैं, ऐसा नहीं कि काव्य के निर्माण में तीन (पृथक्-पृथक्) कारण है।

वस्तुतः आचार्य मम्मट ने शक्ति, निपुणता और अभ्यास को समुदित रूप में काव्य का हेतु माना है। उनके विचार से न केवल शक्ति ही हेतु है, न केवल निपुणता और न केवल अभ्यास ही हेतु है, बल्कि तीनों का सम्मिलित रूप ही काव्य का हेतु हैं।

आचार्य मम्मट द्वारा उल्लिखित तत्त्वों का विवेचन आगे किया जा रहा है-

(१) **शक्ति**-आचार्य मम्मट ने शक्ति को काव्य का प्रथम हेतु स्वीकार किया है। इसी को अनेक आचार्यों ने प्रतिभा भी कहा है। प्रतिभा और शक्ति एक ही तत्त्व हैं। कवित्व का बीजभूत संस्कार विशेष ही शक्ति है। भाव यह कि कवि के हृदय में जन्म-जन्मान्तर के संस्कार संचित रहते हैं जो कवि के जन्म के साथ जन्म लेते हैं, उसे ही कवित्व का बीज कहा जाता है। वह कवि की आत्मा में विद्यमान सूक्ष्मतत्त्व है जिसे काव्यकला भी कहते हैं। उसके बिना काव्य की रचना नहीं हो सकती, यदि छन्दोबद्ध रूप में कुछ कर भी लिया जाय तो वह उपहास योग्य होता है। तात्पर्य यह कि यदि लोक-शास्त्र-काव्य आदि के पर्यवेक्षण से निपुणता तथा काव्य-ज्ञान की शिक्षा से अभ्यास हो भी जाय तो सर्वथा अनुपहसनीय काव्य का निर्माण नहीं हो सकता, उसके लिए तो कवित्वशक्ति ही समर्थ है जो जन्म-जन्मान्तर से संचित अथवा दैविक शक्ति (प्रतिभा) है जिसके बिना काव्य-रचना हो ही नहीं सकती और यदि हो भी जाय तो वह उपहसनीय होता है।

मम्मट के पूर्ववर्ती अनेक आचार्यों ने शक्ति (प्रतिभा) को काव्य का प्रधान कारण माना है। भामह ने प्रतिभा को ही काव्य का प्रमुख हेतु स्वीकार किया है। उनका कहना है कि प्रतिभा सम्पन्न कवि ही सर्वथा निर्दोष काव्य की रचना कर सकता है। आनन्दवर्धन ने तो शक्ति (प्रतिभा) को ही काव्य-रचना का प्रमुख कारण मानते हुए कहा है कि यदि व्युत्पत्ति के बिना कवि काव्य-रचना करता है और उसमें अव्युत्पन्न जन्य दोष भी हो तो शक्ति के द्वारा उसका संवरण हो जाता है किन्तु शक्ति (प्रतिभा) के न होने पर रचा गया काव्य अन्तस्तत्त्वशून्य हो जायेगा-

अव्युत्पत्तिकृतो दोषः शक्त्या संप्रियते कवेः।

यस्त्वशक्तिकृतस्तस्य झगित्येवावभासते।।

देवीभागवत में कहा गया है कि 'नानृषिः कुरुते काव्यम्' अर्थात् जो संसार रूप प्राक्तन शक्ति से हीन है वह काव्य-रचना नहीं कर सकता, भल ही वह शब्द और अर्थ का संयोजन कर ले, किन्तु ऐसे काव्य की रचना नहीं कर सकता, जिसमें नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का सन्निवेश हो। नये-नये अर्थों का उन्मीलन करने वाली प्रज्ञा को प्रतिभा कहते हैं-"प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता"। कुन्तक ने पूर्व जन्म तथा इस जन्म के संस्कार के परिपाक से पुष्ट होने वाली विशिष्ट कवि-शक्ति को ही प्रतिभा कहा है-"प्राक्तनाद्यतनसंस्कारपरिपाकप्रौढा प्रतिभा काचिदेव कविशक्तिः"। वामन के अनुसार प्रतिभा कवित्वबीज है-"कवित्वबीजः प्रतिभानम्" अर्थात् प्रतिभा पूर्वजन्म का संस्कार विशेष है जो ईश्वर प्रदत्त होती है। इसी की सहायता से कवि भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों को देखता है। इसीलिए कवियों को क्रान्तदर्शी कहा गया है-"कवयः क्रान्तदर्शिनः"। वे इन्द्रियातीत विषयों का साक्षात्कार कर लेते हैं।

(२) **निपुणता**-मम्मट के अनुसार काव्य-निर्माण द्वितीय हेतु "निपुणता" है। इसी को आचार्यों ने व्युत्पत्ति भी कहा है। लोक, शास्त्र, काव्यादि के अवेक्षण से निपुणता आती है। यहाँ लोक से तात्पर्य लोकवृत्त से हैं अर्थात् चराचरात्मक जगत् (लोक) के व्यवहार से निपुणता (व्युत्पत्ति) प्राप्त होती है। शास्त्र से तात्पर्य काव्यवर्णादिनियमबोधक शास्त्र से है। जैसे, पिंगल मुनि आदि आचार्यों द्वारा रचित छन्दःशास्त्र, प्रकृति-प्रत्यय आदि के विश्लेषणपूर्वक शब्द व्युत्पत्याधायक शास्त्र पाणिन्यादिप्रणीत व्याकरणशास्त्र, नामादि के संग्राहक अमरसिंहादिप्रणीत कोषग्रन्थ, नृत्य-गीत आदि ६४ कलाओं के प्रतिपादक ब्रह्मभरतकोहलादिप्रणीत कलाशास्त्र, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के प्रतिपादक ग्रन्थ (धर्मशास्त्र, स्मृतिशास्त्र, पुराणादि) धर्मशास्त्र, अर्थ के प्रतिपादक गर्गादि प्रणीत अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्रादि, काम के प्रतिपादक वात्सायानादि प्रणीत कामशास्त्र, मोक्ष के प्रतिपादक व्यासकपिलादिप्रणीत दर्शनशास्त्र एवं उपनिषदादि, पालकाप्यादि प्रणीत हयायुर्वेदादि गजशास्त्र शालिहोत्रादिप्रणीत अश्वशास्त्र तथा खड्ग आदि के प्रतिपादक धनुर्वेदादि लक्षणग्रन्थ, आदि के पर्यालोचन से निपुणता प्राप्त होती है। महाकवियों द्वारा रचित रामायण आदि काव्यग्रन्थ, आदि पद से इतिहासादि का ग्रहण होता है।

महाभारत आदि इतिहास हैं इनके बारम्बार पर्यालोचन एवं चिन्तन से भी निपुणता (व्युत्पत्ति) प्राप्त होती है। व्युत्पत्ति से तात्पर्य बहुज्ञता से है। कुछ विद्वान् व्युत्पत्ति का अर्थ "समस्तपदार्थपौर्वापर्यपर्यालोचनकौशलम्" करते हैं।

(३) **अभ्यास**-काव्य निर्माण का तृतीय हेतु "अभ्यास" है। जो काव्य की रचना करना जानते हैं और उनकी समीक्षा (सदसत् की विवेचना) करना जानते हैं, उनके उपदेश (शिक्षा) के अनुसार नवीन श्लोकों की रचना करने में और उनमें जोड़ तोड़ करने में बार-बार प्रवृत्त होना अभ्यास है। भाव यह कि काव्य के मर्मज्ञ विद्वानों तथा समालोचकों के पास रहकर और उनसे शिक्षा प्राप्त करके श्लोकों की रचना में बार-बार प्रवृत्त होना 'अभ्यास' है। काव्यरचना करने वाले जिज्ञासुओं को केवल शास्त्रज्ञान होना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि उन्हें कविता बनाने का बार बार अभ्यास भी करना चाहिए क्योंकि बिना अभ्यास किये काव्य-रचना में वह सफल नहीं हो सकता। जैसा कि आचार्य मंगल का कथन है कि अभ्यास के बिना काव्यरचना दुष्कर (कठिन) है, काव्यकर्म में अभ्यास ही उत्तम व्यापार है और काव्यरचना में निरन्तर प्रवृत्त होना ही अभ्यास है। इसी के कारण ही किसी काव्य में उसके रचयिता का कौशल झलकता है-"अभ्यासः काव्यकर्मणि परं व्याप्रियते। अविच्छेदेन शीलनमभ्यासः, स हि सर्वगामी सर्वत्र निरतिशयं कौशलमाधत्ते" । इसलिए कवियों को चाहिए कि वह पहले काव्य-रचना का अभ्यास करें।

स्पष्ट है कि आचार्य मम्मट ने केवल शक्ति या प्रतिभा अथवा व्युत्पत्ति या अभ्यास को ही काव्य का हेतु नहीं माना है। उनके अनुसार शक्ति, निपुणता और अभ्यास तीनों ही काव्य के हेतु है। ये तीनों अलग-अलग कारण नहीं, बल्कि तीनों सम्मिलित रूप में ही कारण हैं क्योंकि केवल एक के होने पर कोई अच्छा कवि नहीं बन सकता, शब्दों को जोड़-जाड़ कर तुकबन्दी भले ही कर ले। इसी बात को स्पष्ट करते हुए आचार्य मम्मट ने लिखा है-""त्रयः समुदिताः, न व्यस्ताः, काव्यस्योद्भवे निर्माणे समुल्लासे च हेतुर्न तु हेतवः"।

यहाँ पर कारिका में 'हेतुः' एकवचन का प्रयोग किया गया है 'हेतवः' बहुवचन का प्रयोग नहीं। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि किसी भी कार्य के प्रति उसकी पूरी सामग्री ही कारण होती है, कोई एक वस्तु नहीं। अतः काव्य-निर्माण में शक्ति, निपुणता और अभ्यास तीनों सम्मिलित रूप में हेतु हैं, अलग अलग नहीं। जिस प्रकार 'जात्याकृतिव्यक्तयः पदार्थः' इस गौतम सूत्र में 'पदार्थ' पद में एकवचन का प्रयोग यह द्योतित करता है कि जाति, आकृति और व्यक्ति इन तीनों में ही शक्ति होती है, अलग अलग-अलग नहीं। जिस प्रकार 'वेदाः प्रमाणम्' इस वाक्य में 'प्रमाणम्' एकवचन का प्रयोग समस्त वेद प्रमाण हैं, यह द्योतित करता है। इसी प्रकार 'हेतुः' एकवचन का प्रयोग तीनों के सम्मिलित रूप में हेतुता द्योतित करता है। इस बात को दण्डचक्राऽऽदि न्याय के द्वारा भी स्पष्ट किया जाता है कि जिस प्रकार घटरूप कार्य के प्रति दण्ड, चीवर, चक्र, कुलाल, मृत्तिका आदि सभी मिलकर कारण हैं, किसी एक से घट का निर्माण नहीं हो सकता; उसी प्रकार काव्य-निर्माण के प्रति शक्ति, निपुणता और अभ्यास तीनों मिलकर ही कारण हैं, ये अलग-अलग कारण नहीं हो सकते।

डॉ० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी